



अनोग्नी । अनेकान्त नय ।

# न्याय युक्तियाँ

[ प्रथम भाग ]



रचना संमहकता

सनूत्पुमार जैन, गुना,

वर्तमान निवास कोटा (राजस्थान)



प्रकाशक :

निरजनलाल जैन

मन्त्री-भा व शक्तिपीर द्वि जैन सि सं समा

## प्राक्कथन



दिगम्बर जैन धर्म के प्रचार और प्रसार के नाम पर इन दिनों जो कुछ हो रहा है वह दिगम्बर जैन समाज से ठिपा नहीं है। कुछ लोग हैं जो अपने को दिगम्बर जैन धर्म में दीक्षित बताकर अध्यात्म का उपदेश करते फिरते हैं पर वास्तुतः न वह अध्यात्म है और न किसी वास्तविक दिगम्बर जैन के मुख में इस प्रकार का अध्यात्म कहा जा सकता है। दिगम्बर जैन धर्म त्याग प्रधान है पर इनके अध्यात्म में त्याग की निंदा की जाती है। दिगम्बर जैन धर्म में मन की तरह वचन और कार्य में भी हिंसादिपाप सेवन का निषेध है पर इनका अध्यात्म वचन और शरीर की क्रिया को जड़ की क्रिया बताकर इतसे होने वाले पापों की उपेक्षा करता है। दिगम्बर जैन धर्म में जरहन पत्र को पुण्य का फल तक बतलाया है पर इनका अध्यात्म पुण्य को विष्ठा बतलाकर दान पूजा आदि पुण्य कार्यों से भावकों को अनुत्साहित करता है। दिगम्बर जैन धर्म आध्यात्मिक विकास के लिये वस्त्रादि का परित्याग अनिवार्य घोषित करता है पर इनका अध्यात्म वस्त्रादि को परद्रव्य बताकर आत्म विकास के लिये उसे बाधक नहीं समझता। इस प्रकार दिगम्बर जैन धर्म की मोहर लगाकर जो अध्यात्म कहा जाता है वह अध्यात्मवान् नहीं

किन्तु दूसरा ही बोध रहस्यपूर्ण 'वाच' है जिसमें निम्ना त्रै-  
 धर्म कौसौ दूर है। जब शारीरिक क्रियाएँ एकान्त रूप की  
 क्रिया हैं तो कौन व्यक्ति शारीरिक भोग विज्ञान में प्रवृत्त  
 चाहेगा क्योंकि इन तथा कथित अध्यात्मवादियों के दृष्ट  
 की क्रिया से पुण्य पाप नहीं होता।

इनके मत में नियतिवाद का भी प्रचार किया जाता है।  
 नियतिवाद की व्याख्या ये इस प्रकार करते हैं—'जो कुछ  
 होता है वह सब पहले से नियत है, उसे कोई टाल नहीं सकता।  
 और नियत इसलिए है कि सर्वज्ञ उन्हें पहले ही सब कुछ है।'  
 इसका अर्थ यह होता है कि मनुष्य जो कुछ चोरी, चन्दन  
 आदि पाप का सेवन करता है वह नियति के आधीन रहकर  
 करता है ऐसी स्थिति में वह दण्ड का पात्र नहीं होता क्योंकि  
 क्योंकि उसका चोरी, व्यभिचार सब सर्वज्ञ पहले ही इन सब  
 थे। अतः वह विचारा अपन द्वारा पाप सेवन करने में प्रवृत्त  
 सकता था।

इस प्रकार इनके अध्यात्म में जो कुछ उद्यम हुआ है वह  
 पाठकों से अनवगत नहीं होना चाहिए। बुद्ध ने अपने शूयवान्  
 का उपदेश दिया था। इनके बाद अन्य अनेक लोग भी  
 शूयवान् की आदम जिस अनाधार को उन्होंने किया वह  
 धीरे धीरे वाम मार्ग में परिणत हुआ तथा आग्नि  
 बुद्ध धर्म को भारत से अपना अभिन्न बना पड़ा।  
 के ये अध्यात्मवादी भी शरीर की क्रियाओं के अद्वैत क्रिया  
 बताकर और पहले से पाप दुर्गम आदि नियत बताकर  
 कुछ ऐसे ही मतव्यों का प्रचार कर रहे हैं जिन्हें परिणाम  
 अदाजा लगाना कठिन नहीं है।

प्रस्तुत पुस्तक ऐसे ही लोगों की प्कात मायता को ध्वस्त करने के लिये लिखी गई है। पुस्तक छद्मोपद्र है। इसकी जगह यदि वह गद्य में होती तो लेखक के मनोभाव अधिक स्पष्ट हो जाते। तर्कप्रधान रचनाएँ पद्य की अपेक्षा गद्य में ही अधिक प्रभावर रहती हैं। फिर भी कोटा के सनखुमारजी ने इस रचना में श्रम किया है। छांदों में कही र स्वरहन अवश्य है लेकिन रचना के विषय को देखते हुये वह उपेक्षणीय है। पुस्तक सर्वे साधारण के लिये पठनीय है और प्रचार के लिये उपयोगी है।

डा० लालबहादुर शास्त्री



अनोसी । अनेकान्त नय ।

## न्याय युक्तिर्या

प्रथम - मंगला चरण ।

(१)

जिननाम जपने जिन शरण स,  
रिद्धी सुसिद्धी सब प्राप्त होती ।  
चेमे महाबल । जिन दिव्य शक्ति ।  
चरणों म उनके मेरा नमस्ते ॥

(२)

गेगादि व्याधी उपसर्ग वर्ग,  
संकट महादुःख शोकादि सग ।  
जिन भक्तिबल से सब नष्ट होते,  
चरणों म उनके मेरा नमस्ते ॥

(३)

पर गुरुल म, युद्धस्थलों में,  
पर भाव मंत्रित घातक बलों में ।  
जिन मत्र बल से होती विजय है,  
चरणों म उनके मेरा नमस्ते ॥

(४)

परयोगनिदा परवाद विद्या,  
परवर्त योगादिक क्लेश कारक ।  
जिन जानया से सब नष्ट होते,  
चरणों में उनके मेरा नमस्ते ॥

(५)

जिनके असरया गुणगान करते,  
चरणा में जिनके मस्तक झुकाते ।  
ऐसे प्रभासिक ! जिन दिव्य हस्ते ।  
चरणों में उनके मेरा नमस्ते ॥

(६)

मगल स्वरूपे ! सिद्धे ! प्रसिद्धे !  
शुद्धात्मने ! शुद्ध ! प्रसुद्ध - बुद्धे ।  
त्रैलोक्य में जो पूजित हुए हैं,  
चरणों में मेरा उनके नमस्ते ॥

(७)

ह्रींकार बीजाणित ! मंत्र मूर्ते ।  
ॐंकार सद्धिते शक्ती स्वरूपे ।  
स्वाहा ! स्वधाकार ! मई सुस्वरते ।  
चरणों में उनके मेरा नमस्ते ॥

(८)

धरणेद्र ! इ द्रादिक भी विनय से,  
मस्तक झुकाते चरणा में जिनके ।  
चरणों में उनके मस्तक झुकाये,  
करते विनय से शत-शत नमस्ते ॥

पश्चात् बुद्धि प्रदायनी भ्रुत इष्ट देवी सरस्वती ।  
सम्पूर्ण ज्ञाता ! जैन माता ! नमोस्तु जिन भगवती ॥

भगवान की दिव्यशक्ति के समय ममघशरण में शक्ति  
ओर उपस्थित जैन महाविद्या । द्वादशांग पूर्व वागी धारिणी ।  
षडयद बागवादिनि । श्यादवाद् नय चक्र स्वल्प । षड् स्वरि ।  
सकल मंत्रशरि । मात्र मार्ग प्रबोधिनि । सम्यक् दर्शन सम्पन्ना ।  
सम्यक्ज्ञानपरायणा । सम्यक्चारित्र सहिते । भ्रुतदेवि ।  
भगवति सरस्वति । जैन माता । जो आगम अनुकूल उनके मत्ता  
की मौजूदगी का निश्चय करते हुए आदर विनय भद्रा के साथ  
प्रणाम कर आ हान करती हैं । यद्यपि मुझ में आध्यात्मिक एवं  
व्यवहारिक सम्पूर्ण धर्म विषयों की लिखने की शक्ति, निर्णय  
करने की शक्ति और उनसे व्यक्त करने की शक्ति अल्प बुद्धि होने  
के कारण नहीं है । तथापि आपके श्यादवाद अनेकानेक तनय सम्यक्  
महान ज्ञान के आश्रय कुछ धार्मिक 'याय प्रसंगों को लिखने  
उद्यत हुआ हूँ । किसी भी आगम अनुकूल मरी धार्मिक 'याय  
रचानाओं में आप महायक है ।

नमोस्तु तुभ्य जगदम्ब भारति,  
प्रसाद पात्रं गुरु मा त्रि टिकरम् ।  
तम प्रसादादिह तत्त्वनिर्णय,  
यथा स्वबोधं विदधे स्वसंविदे ॥

आगच्छ तिष्ठो कंठ मम ह रतनत्रय धर्मावती ।  
सम्यक्मई हो बुद्धि पाऊ और माता शुभगती ॥  
व्यवहार-विशेष भेद से सब विषय का चलेख हो ।  
व्यवहार में भी आत्म चरित्र का खनोखा लेख हो ॥  
देवशास्त्र गुरु तीन धचन प्रमाण मुझे हो ।  
रतनत्रय लंबलीन मर्यादा चलेख हो ॥



धार्मिक इन गूढ़ भेदों का निरूपण कीजिये ।  
 लौकिक अलौकिक विषयों के सत्यार्थ निर्णय दीजिये ॥  
 वे स्याद्वाद यथार्थ हों अनैकान्तनय परिपूर्ण हों ।  
 व्यवहार निश्चय भेद के प्रति भेद न उचीर्ण हों ॥  
 एकांतनय के पक्ष का ग्य-इन यहाँ सुस्पष्ट हो ।  
 व्यवहार निश्चय धर्म दोनों पक्ष लेता इष्ट हो ॥  
 होषो सहायक लेर न आशङ्कन करता आपको ।  
 स्वास्ते ! प्रसिद्धे ! सिद्ध हस्ते ! है नमस्ते आपको ॥

—अनेकांतनय धर्मवाद !

प्रयोजन की साधना में सफलताओं के प्रदर्शन !  
 और इन न्याय युक्तियों की रचना करने के प्रमाण भूत  
 आधार !

भगवान् मुन्द मुन्द आचार्य । भगवान् अकलं देव ! भी  
 अमृतचन्द्र आचार्य, एव आत्मविद्या सिद्धि प्राप्त भू योगिराज ।  
 महासेन आचार्य । भी ममत्त भद्र स्वामी । भी गुणभद्र आचार्य  
 भी पूज्यपादाचार्य । गण भी पचाभ्याषी शास्त्रकार । भी सकल  
 कीर्ति आचार्य । स्याद्दि तेन धीतरागी दिगम्बर महान् जैन  
 आचार्या के अनेकांतनय धर्म शास्त्रों के आधारों पर से उनके  
 सत्यार्थ कथनों के विशेष अभिप्राया को लेते हुए आगम अनुकूल  
 इन न्याय युक्तियों के प्रथम भाग की अभी रचना की गई है ।  
 शेष न्याय युक्तियों द्वितीय भाग में सम्पूर्ण होंगी ।

जैन शासन अनेकांतनय धर्मों की ये अनोखी न्याय युक्तियों  
 जैन शासन के अनेकांतनय न्याय बलों से अनेकांतनय  
 न्याय तर्कवादों से गूँधी गई हैं । जो किसी भी नय के पर  
 वादियों द्वारा जीवों न जा सके ऐसी अनेक हैं । इनके कथन

अनेकान्तनय धर्मस्वरूप अनन्तान्तनय ज्ञान द्वारा ही समझे और जान जा सकते हैं। एकांतनय ज्ञान स नहीं। क्योंकि एका-  
न्तनय ज्ञान एक ही अर्थ स वस्तु के एक ही गुण धर्म को जानता है जिसके कारण वस्तु के अनेकान्त गुणधर्म उमी में छुपे हुए रह जाते हैं तब अनर्थ हो जाता है। और स्याद्वाद अनेकान्तनय ज्ञान उम एक अर्थ के अनेक अर्थ करता है। जानता है जिसके कारण वस्तु अनेकान्त गुणधर्मात्मक सिद्ध हो जाती है।

देखो—ज्ञान के विषय में भगवान अकलक देव ! सत्याथ निणय करते हैं कि—जो ज्ञान एक ही अर्थ को जानता है वह जनक जय को नैम जान सकेगा। पुरुष विषयक ज्ञान पुरुष को ही जानगा। स्थाणु विषयक ज्ञान स्थाणु को ही जानगा। मोक्ष विषयक ज्ञान मोक्ष को ही जानगा। अत एक ज्ञाननय का तो अधा को जानना जब संभव ही नहीं है तो न संशय हो सकता है और न विपर्यय ही। और निमित्त नैमि त्तिसंख्येय न मानने में ममस्त अनुभव सिद्ध व्यवहार नय धर्म का लोप हो जायगा।

—देखो राजवातिक भगवान अकलक देव !

अब सर्व भाषण भाष्या की जानकारों के लिए निश्चय और व्यवहार दोनों धर्मनयों की पवित्रता सत्यार्थता तथा उपादेयता के आश्चर्य जनक। कथन उन परम पीतरागी दिग म्बर जैन जाचार्यों के अनेकान्त नय धर्म स्वरूप ! अनन्तान्त नय वाय मला से, अनेकान्त नय भेदनों से, और अनेकान्त नय वाय तर्कवाणों से जैन शासन अनेकान्त । अनोखी । न्याय युक्तियों द्वारा संक्षिप्त में करते हैं -

व्यवहार निश्चय धर्म की उलझी हुई हैं मुक्तियाँ ।  
 सुलथा रहे आचार्य घर ! लेकर अनोखी युक्तियाँ ॥  
 बिन युक्तियों के पाई किसने आरम्भल की शक्तियाँ ।  
 बिन युक्तियों के प्राप्त किसने की अभी तक मुक्तियाँ ॥  
 उन क्रिया शीला ने करी भगवान का जन्म भक्तियाँ !  
 तब अनेकों उन युक्तिया से मिली उनको मुक्तियाँ ॥  
 भगवान की ही भक्तिया म व्याप्त हैं वे मुक्तियाँ ।  
 नित यात्र रगिय जैन शासन की अनोखी युक्तियाँ ॥

—जैन शासन -याय तकवाद ।

जैन शासन अनेकान्त नय धर्मों की अनोखी न्याय  
 युक्तियाँ !

निश्चय और व्यवहार दोनों धर्म नय । भगवान सर्वज्ञ देव  
 के कथन किए हुए होन के कारण सत्यार्थ है —

अनेकान्त निर्णय ज्ञान में निश्चय धर्म सत्यार्थ है ।  
 अनेकान्त निर्णय ज्ञान में व्यवहार धर्म सत्यार्थ है ॥  
 नीला चरित्र पत्रिण हैं आपस में दोनों मित्र हैं ।  
 दोनों ही भेद अभेद रूपी रतनत्रय कर युक्त हैं ॥  
 हीना म साधक - साध्य का सद्भाव होना अर्थ है ।  
 व्यवहार, निश्चय को असंगत मानना ही व्यर्थ है ॥

—भगवान कुंदकुंद आचार्य

व्यवहारनय धर्म का उपादेयता के कारण को कहते हैं —

निश्चय नय है रतनत्रय उपादेय अतिमान ।  
 मोक्ष मार्ग व्यवहारनय कारण इसका जान ॥  
 कारण होने से बना उपादेय व्यवहार ।  
 मोक्ष मार्ग के प्रदर्शक दोनों ही हितकार ॥

—भगवान कुंदकुंद आचार्य

आचार्य महाराज और भी उदाहरण देते हैं —

जैसे अशुद्धित स्वर्ण का मल नष्ट करो क लिए ।  
 अग्नी ही साधक हो मने है शुद्ध करने क लिये ॥  
 तैमे ही यद् व्यवहार साधक और निश्चय साध्य है ।  
 बिन साध्य साधक भाव के दानों ही साध्य असाध्य है ॥

—भगवान् कुदकुंद आचार्य

व्यवहार नय ही सार्थक है —

मधिकल्प खोटे ध्यान को निर्मूल करने के लिये ।  
 सविन्यत्तम ध्यान को अनूकूल करने के लिये ॥  
 'व्यवहारनय ही सार्थक है शुभ भाव धरने क लिये ।  
 रागादि द्वेषक कपाया को दूर करने के लिये ॥

—भगवान् कुदकुंद आचार्य

दर्शन विगुद्धित ज्ञान चारित्रिक स्वाभाविक धर्म है ।  
 रागादि द्वेषक कपाया से रहित इसका मर्म है ॥  
 शुभ भाव जालम्यन महिन परमार्थ का कर्ता सभी ।  
 ऐम उचित 'व्यवहार को नहिं विस्मरण करना कभी ॥  
 ऐम पुन्य व्यवहार को यदि छोड़ देते हैं अभी ।  
 सत्यार्थ निश्चय धर्म ही केवल कपादित है सभी ॥  
 इस प्रयोजन से जो प्रहण करते हैं निश्चय धर्म को ।  
 चारित्र से वे भ्रष्ट हैं नहिं जानते इस मर्म को ॥

—जनशासन न्यायबल

भगवान् सर्वज्ञ देव के कथन निष्पट्ट हुए खलाए टुए निश्चय  
 और व्यवहार दोनों धर्मनयों की रक्षा करने वाले कौन होते हैं ?  
 तब श्री अमृतचन्द्र आचार्य महाराज कहते हैं —

व्यवहार निश्चय धर्म दोनों को समझते जानते ।  
 सर्वश भगवन ! के रहे दोनों यथार्थ प्रमानते ॥  
 ऐसे हैं जो गुणवान दोनों तथा से परिपूर्ण हैं ।  
 वे पुण्य रूपी धर्मतीर्थों के प्रवर्तक पूर्ण हैं ॥

—श्री अमृतचन्द्र आचार्य

और तीर्थवरों के स्थापित किए हुए पुण्य रूपी धर्म  
 तीर्थों को अनेकानेक धर्मों को उनके महान शुभ बाह्य क्रिया  
 रूप चारित्रादि आचरणा का नष्ट करने—वाले लोप करने वाले  
 कौन होते हैं ?

तब श्री अमृतचन्द्र आचार्य महाराज कवन करते हैं कि—  
 सम्यक अनेकानेक नये भेदनय आगम कवन,  
 जाने बिना शुद्ध निश्चय धर्म को न जानते ।  
 यही एक निश्चय है और अन्य कोई नहीं,  
 मिथ्या एकान्तनय ज्ञान से प्रमानते ॥  
 ज्ञान के अभाव में निश्चय नयी होन के,  
 करते प्रयत्न और होते प्रवेश हैं ।  
 ऐसे जीव पहले ही व्यवहारनय साधन छोड़,  
 होते प्रमादी स्वधर्मी विज्ञेय हैं ॥

और—

निश्चयनय धर्म का स्वरूप सत्य जाने बिना,  
 निश्चय अज्ञान को ही करें अगीकार हैं ।  
 बाह्य क्रिया कर्मनय में आलसी है ऐसा जीव  
 व्यवहार को लोप करे मन का विकार है ॥  
 और बाह्य क्रिया रूप आचरणा को नष्ट करे,  
 मूर्ख हैं वह ऐसा जीव, त्रयाय का प्रसंग है ।

सर्व ही व्यवहार के घर्मादि चरण नष्ट हाय,  
तासे दोना घर्म तय भ्रष्टता क अंग है ॥

—श्री अमृतचन्द्र आचार्य

और वह भी पुण्य निश्चय घर्म को लोप करता है जो -  
जो पुण्य व्यवहार से ही एक निश्चय जानता ।  
है यही निश्चय एक केवल अय को नहीं मानता ॥  
वह शुद्ध आत्मा की न्या को नष्ट करता है सग ।  
निश्चय धरम का लोपकारी मूर्ख है वह सर्वदा ॥

—श्री अमृतचन्द्र आचार्य

अब आचार्य महाराज बुद्धिमान सम्यग्गृहि जीवों के-  
आचार विचार का कथन करते हैं -

अनया उपचार के कथना क ज्ञाता और,  
जीवा क कर्मबद्धरूप को निहारते ।  
जानते मसानी दशा शरीरी सम्बन्धरूप,  
कारण जा आशय क धों का मानते ॥  
परते उपाय मुक्ति होन के निर्णय कर,  
संघर निर्जरान्ति रूप तत्वा में वर्तते ।  
ऐसे बुद्धिमान क्रियावान अनेकान्त से,  
सम्यक त्वा तनय धर्म में प्रवर्तते ॥

श्री अमृतचन्द्र आचार्य !

जब मोक्ष मार्ग के प्रदशक धर्मनय दोनों बड़े ।  
सर्वज्ञ का यह कथन है फिर एतनय पर क्यों जड़े ?  
सत कथन कर्ता प्रवर्तक सर्वज्ञ त्व महान हैं ।  
दोनों धरमनय के कथन ही स्वयं सत्य प्रमाण हैं ॥

भगवान् के ऐसे वचन आता गया समागते ।  
 दाता धर्मभंग पक्षन निरक्षय अभेद पत्वानते ।  
 व्यवहार को छोड़ दृष्ट जो एक धर्म प्रमाणते ।  
 ओ दाता पुण्य मुभक्ति पूजा वध कारण जानत ।  
 उनके सिंग भी तु दकु-दाचार्य के उपदेश हैं ॥  
 आचार्य अमृतचन्द्र के इस विषय में आदेश हैं ।  
 अनेका न धर्मा वं वधन करते दृष्ट विस्तार स ।  
 फिर कि विद्वय के वधन सब एक निरक्षयसार स !

आगम विपरीत दूषित वातावरणों, दूषित वधनों के प्रतिगुल  
 भगवान् कुन्दकु-दाचार्य । कहते हैं कि जो पुण्य पणा वहे कि-  
 भगवान् की भक्ति धर्म पुण्यानि हैं वे वध मय ।  
 इतम धर्म होता नही, होता हुआ देखा है कथ ।  
 इत्यानि मिथ्या कथन से स्वय अहित शपता पर रहे ।  
 एकान्तनय वं ज्ञान म वेदोरा होकर कह रह ॥  
 तब ऐसे नास्तिक मति जीवा को भगवान् कुन्दकु-दाचार्य  
 ताजना दते हैं, उनको धिक्कारत हैं कि एसा जीव कैसा है ?

आगम विपरीत जो पूजा भक्ति पुण्य को  
 कह कि कि यह तो वध का कारण महान है ।  
 कर है उत्थापन जो धर्म पुण्य कार्या का,  
 कैस कहो आरम्भ का होगा फल्याण है ?  
 जैसे एक कोढ़ी पुण्य अपना गुल नाश कर,  
 तैस आगम विरुद्ध करता अज्ञान है ।  
 कुन्दकु-दाचार्य कहे नास्तिक है ऐसा जीव,  
 पूजा को भी वध माने कोढ़ी समान है ॥

—भगवान् कुन्दकु-दाचार्य

जसा बहुत हुए आचार्य महागज जायों को उपदेश देते हैं कि वही पुरा मन्त्ररूपि बुद्धिमान है जो

देव गाम्त्र गुरु की पूजा भक्ति निरव कर,  
मान कन्याग कर्ता वही बुद्धिमान है ।  
पर ही जन्मी भक्ति वापा का नाश करे,  
मुक्ति मार्ग धारण प्रयानता ममान है ॥

दर्शन चारित्रादि क्रिया म मन्पन हुआ  
ऐसा जीय आमा का कर्ता कन्याग है ।  
निरव ही भगवान का जो भक्ति कर मुक्ति हेत,  
वहा जीय मन्पक सगुण धर्मवान है ॥

—भगवान बुद्ध आचार्य

और जो जीय विना कारण अपेक्षा क पुण्य और पुण्यानु-  
बन्धी पुण्य को भी बन्ध का, भ्रमण का कारण मानत हैं वे तीर्थ  
करों महापुरुषों—पुण्यप्रकृतियों का अपमान करत हैं । किन्तु भग  
वान बुद्ध आचार्य तीर्थकरा—पुण्यप्रकृतियों की अपभ्रा पुण्य  
का आदर ममान करते हुए आधकों का पुण्य मन्चय का उपदेश  
देते हैं ।

जो विना कारण पुण्य को भी बन्ध कारण मानते ।  
भगवान क अनिकात धर्मा को नहीं ये जानते ॥  
ये पुण्य प्रकृति महाग तीर्थकर बड़ पुण्यारमा ।  
भूले हुए हैं पुण्य उनके—पुण्यद्रोही आत्मा ॥  
करते अहित निज आत्मा को पुण्य हीन बना रहे ।  
' भी बुद्ध आचार्य भगवान ' पुण्य मन्चन कर रहे ॥



हे श्रावको !

उम पुण्य रूपी धर्म म करना प्रवर्तन धर्म है ।  
 सब पाप के आरम्भ से होना निवर्तन कर्म है ।  
 इसलिय प्राणी पुण्यमयी तू धर्म का ही ध्यान कर ।  
 सर्वज्ञ न यह कहा है सत्यार्थ हित को जानकर ॥

—भगवान कुदकुद आचार्य

यदि कोई ऐसा कहे पुण्य की न परवा करू,  
 अपा पुरुषार्थ मे ही ज्ञान योग वृद्धि है ।  
 अनेला पुरुषार्थ ही समस्त कार्य सिद्ध कर,  
 पुरुषार्थ से ही सम्पन्नता समृद्धि है ॥  
 हे तो बात सही कि-तु पुण्योन्मय काल बिना,  
 केवल पुरुषार्थ को ही माने अज्ञान है ।  
 बिना पुण्यत्मा क सफलता न प्राप्त होय  
 पुरुषार्थ की सफलता म पुण्य ही प्रधान है ॥

—श्री गुणभद्र आचार्य

बिना पुण्य आत्मा को नितना ही क्लेशित करें,  
 कितना पुरुषार्थ करें कुछ भी न अर्थ है ।  
 जैसे ज्ञान हीन को क्रियायें सब निष्फल रहे,  
 तैसे पुण्यहीन का पुरुषार्थपना -वर्थ है ॥  
 पुण्य का ससर्ग होना सर्व कार्य सिद्धि अर्थ,  
 उत्तम ह लाभकारी, न्याय का प्रसंग है ।  
 देखो रथ एक चक्र द्वारा कभी न चले,  
 यही तो याय बल की युक्तिया का अंग है ॥

—जैन शासन अनेकान्त यायबल

जैसी करनी वैसी भरनी —

पुण्य की करनी करी तो बनगया पुण्यात्मा ।  
माक्ष की करनी करी ना बनगया परमात्मा ॥  
पाप की करनी करी तो बनगया पापात्मा ।  
हर्य करनी के थडे हँ दर्य इनको आत्मा ॥

—जनशासन प्रत्यक्षवाद

आत्मविद्या सिद्धि प्राप्त योगिगज श्री महासेन आचार्य ।  
पुण्य और पाप की शक्तियों का कथन करते हैं -

पुण्य की प्रबलता में धर्म साधनादि होय,  
पाप की प्रबलता में सभी कुछ नष्ट है ।  
पुण्य की प्रबलता में जीव मत्वा सुखी रहे,  
पाप की प्रबलता में कुछ नाही इष्ट है ॥  
पुण्य को विधान पुन्य प्रकृति करन हारो,  
ऐसो सहारो और अन्य नहीं सभव है ॥  
धिया पुण्य प्रबलता के जोर की तो बात क्या,  
कर्मा की निर्जरा भी होना असभव है ॥

—श्री महासेन आचार्य

पुण्य की प्रबलता में रोग शोक नष्ट होत,  
पुण्य की प्रबलता में सकट विनष्ट है ।  
पुण्य की प्रबलता में सभी कुछ सिद्ध होत,  
धर्म अर्थ काम मोक्ष होना स्पष्ट है ॥

पुण्य की प्रबलता म धरणेद्र का आसन बने,  
 और की तो बात क्या है इद्र भी जाहृष्ट है ।  
 बिना पुण्य जीव का कहो रक्षा पान करे,  
 पुण्य हीनताइ बड़ा भारा अनिष्ट है ।

—श्री महासेन आचार्य ।

लौकिक देवों-वृद्ध ऋषियों के पुण्य और पुण्यानुबन्धी  
 पुण्या न महान प्रभावक आश्चर्यजनक विषया ही और भी  
 विशेष विस्तार में जाने के लिये पुण्य विधान रचना सप्रह को  
 पढ़े । और मनन करे ।

श्री महासेन आचार्य महाराज के जिनागममार पूर्वार्द्ध के  
 चतुर्दश मर्ग म स्थित गये जात्म विद्या का के आश्चर्य जनक  
 कथना को सक्षिप्त म कहते हैं —

श्री महासेनाचार्य ने हैं जात्म विद्या के कवन ।  
 आचार्य क कवन है सर्वज्ञ जैम ही वचन ॥  
 कर्मा की हानो निर्जरा होता है सधर क वका ।  
 जो पूर्व के हैं अशुभ कवन उ ही के सबव का ॥  
 होती है उन्ही निर्जरा शुभ कथ की होती नहीं ।  
 शुभ कथ की यदि निर्जरा हो, निर्जरा फलती नहीं ॥  
 रुकते क्वीन कुराध है शुभकथ रुकते हैं नहीं ॥  
 शुभ कथ भी रुकने लगे तो जीव फल सुगते नहीं ।  
 शुभ अशुभ कथों के निमित्तों से शुभाशुभ है गति ।  
 शुभ कथ फल की सुगति हीतो अशुभ फल की दुर्गती ।

उस निर्जरा से पाप भडते पुण्य ऋद्धते है नहीं ।  
 यन् पुण्य भी मडने लगे तो पुण्य फल मिलते नहीं ॥  
 पुण्यानुबन्धी पुण्य फल स फलित रहता आत्मा ।  
 पुण्यात्मा ही पुण्य की होती प्रकृति परमा मा ॥  
 परमात्मा की भक्तिया से पुण्य का सचय हुवा  
 तब पुण्य की क्या निर्जरा हो ? याय मे निर्णय हुवा ।  
 शुभ बन्ध ही काट अशुभ बन्ध का ऐसा याय है ।  
 शुभ बन्ध की भी निर्जरा को मानना अयाय है ॥  
 पुण्य जिनके क्षीण होते देखलो उनको त्याग ।  
 दिन पुण्य क ही जीव की हाता रहा है दुर्दगा ॥  
 जब पुण्य का हो उदय तब ही निर्जरा ह नी सभी ।  
 पापान्या म निर्जरा हाती हुइ दोगी पमी ?

—श्री महासेन आचार्य !

आचार्यों न पुण्यवाना की रची है कथाय ।  
 उम पुण्य रूपी धर्म की कितनी चलाइ प्रयत्न ।  
 आ कुन्धुत्वाचार्य के भी पुण्य के प्रति कथ्य है ।  
 ये सर्व ही सर्वज्ञ जैसे सत्य रूपी बन्ध है ।  
 आचार्यों का सब बधन अब लोप होना उ ।  
 मर्यज्ञ ही जान भविष्यत समय कैमा इग्न ।  
 हे धाय उन आचार्यों को कर्म गुन कष्ट र्दे ।  
 भगवान का करना प्रथम भक्ति यही सिद्ध है ।  
 फिर दान पुण्यादिक सभी करना बद्द कर्म है ।  
 होना प्रवर्तन धर्म स यह आत्मा कर्न ।

भगवान की भक्ति हृदय जिनके समाई है अमी ।  
 त्रैलोक्य की ही सम्पदा उनको न भायी है कभी ॥  
 इस भक्ति में ही छुप रहा है आत्मा का धर्म है ।  
 जब धर्म है तो धर्म ही अपना हुआ सत्कर्म है ॥  
 तपशील सयम व्रतों का सेवन सदा करते जि हैं ।  
 उनके हृदय से पूछिय क्या और कुछ रुचते उन्हें ॥  
 चारित्र दर्शन ज्ञान रूपी भावना भाते जिहें ।  
 उनके हृदय से पूछिय क्या और कुछ भाता उन्हें ?  
 भगवान की भक्ती धरम पुण्यादि जो करते जिहें -  
 उनके हृदय से पूछिये आनन्द क्या आता उन्हें ?  
 आनन्द में ही प्राप्त है सब सुखों का जो सार है ।  
 आनन्द में इस जीव का उद्धार ही उद्धार है ॥

—याय तर्कवाद !

वादी की यह प्रतिज्ञा थी कि अकले ज्ञाननय से ही धर्म  
 फट जाते हैं । एसा एसा तनय की प्रतिज्ञा को भगवान अकलर  
 देव स्याद्वाद अनैकतवाद् द्वारा खण्डन करते हैं —

श्री अक्लक' सुदेव जो जग में हुए प्रसिद्ध ।  
 'यायालकारित रची राजवार्तिक सिद्ध ॥  
 जिनके कथन अकाल्य हैं जीत सके ना कोय ।  
 तारा देवी । सम यदि प्रबल बुद्धिवर होय ॥  
 जीत सनी तारा नहीं फिर जिसकी सामर्थ ।  
 सिद्ध शक्ति के सामने स्यार शक्ति है व्यर्थ ॥  
 जिनके कथन प्रमाणते बडे-बड़े विद्वान ।  
 सिद्ध हुए उनके कथन आगम कथन प्रमाण ॥

कहते भी जगलक जी एक ज्ञान नय सार ।  
 उपयोगी होता कहीं हो जाता बद्धार ॥  
 रहता फिर जीवात्मा इमी ज्ञान जाधार ।  
 दर्शन चारित्रिक क्रिया क्यों करता अनिवार ॥  
 एक ज्ञाननय से यगी जीव मुक्ति को पाय ।  
 ध्यान तपश्चर्या क्रिया के क्यों करे उपाय ??  
 एक ज्ञान ही ज्ञान का फिर होना उपयोग ।  
 पूजा भक्ति प्रमाण का क्या रहता संयोग ??  
 होते ही इस ज्ञान के हो जाता षट् मुक्त ।  
 क्यों ठहरा मसार में, कथन नहीं उपयुक्त ॥  
 अवधिज्ञान धारी षडे धनेका त नय युक्त ।  
 एक अकेले ज्ञान से नहीं हुए वे मुक्त ॥  
 दर्शन चारित्रिक क्रिया जब तप ध्यान ममेन ।  
 मेमे उत्तम कर्मनय विण मुक्ति के हत ॥  
 मुक्त हुए तब शीघ्र ही क्रिया धर्म आधार ।  
 दर्शन बल चारित्र बल ! विना न हो बद्धार ॥  
 तामे एसा ज्ञाननय क्रिया विना है नष्ट ।  
 ज्ञान सहित क्रिया करे वही ज्ञान है इष्ट ॥  
 भ्रष्टा में सब झलकते कथन प्रत्यक्ष परोक्ष ।  
 ध्याचाराग क्रिया विना कभी न समय मोक्ष ॥  
 जत कर्मनय ज्ञाननय दोनों का संयोग ।  
 होता ही अनिवार्य है तभी सफलता योग ॥  
 धर्म रतनत्रय का कहो क्या होये है अर्थ !  
 तीनों में से एक को छोड़ा तो सब व्यर्थ ॥

तामे तीना धर्म को पकड़े रहो सुजान !  
मिले हुए तीना रह तब होगा कल्याण !!  
धर्म रतन त्रय को उहा त्रिबल योग । बलवान ।  
तीनों की ही साधना मोक्ष मार्ग पहिचान !!

—भगवान अकलकदेव ।

साराश यह है रतन त्रय म क्रिया एक प्रधान है ।  
चारित्र दर्शन के बिना सब ज्ञान कोरा ज्ञान है !!  
इस भेद रूपी रतन त्रय की क्रिया ही से प्राप्त है ।  
ऐसा महान अमेर है जो भेद ही म व्याप्त है !!  
चारित्र दर्शन की क्रियाओं का बड़ा ही भर्म है ।  
इनके बिना जो धर्म है वह एक सूरा धर्म है !!

—न्यायवल

चारित्र दर्शन क बिना क्या ज्ञान से ही आत्मा ।  
जाना किसी ने क्या कभी बनता हुआ परमात्मा !!  
सर्वार्थ सिद्धी देव भी आध्यात्मिक ज्ञानी बड़े ।  
चारित्र दर्शन के लिए ललचायते रहते राड़े !!

चारित्र दर्शन की क्रियाय स्वर्ग म होती नहीं ।  
बनगी अरुले ज्ञान नय से मुक्ति भी होती नहीं !!  
अत एव वे ससार म चारित्र दर्शन पाँयगे ।  
तब ध्यान तप रूपी क्रिया से मुक्त होते जायगे !!

—न्यायवल ।

यह ज्ञान दीपक भेष्ट है यह जानते बुध जन सभी ।  
पर तेल बत्ती के बिना दीपक जला भी है कभी ?

इसको जलाने क्रियाबल का है जगत् का न  
जो क्रिया विना दीपक जलादे सब जगत् नष्ट

—

बिन क्रिया करनी कर्मनय के फल एवं ज्ञान  
जो स्वयं अपने आप ही ध्वंस कर देता है  
बिन ज्ञान रूपी कर्मनय के कर्मनय फल नहीं  
करनी वे फल निरिपत मिले कयनी कर्म फल नहीं

जिम्मे न की करनी कभी करनी बिन ज्ञान के  
इस ही गता में आत्मा समाप्त हो जाती है  
वे कौन से हैं क्रिया करनी कर्मनय फल नहीं  
अकलंक स्वामी ने किये इनके कर्मनय फल नहीं

आचार और विचार मग्नता पर्यन्त ही है  
जो धर्म आचाराग हीना धर्म ही नहीं है  
अकलंक स्वामी ने कहा जो क्रिया बल ही है  
चारित्र्य दर्शन बल क्रिया का ही फल है  
उनके लिए है कठिन मुष्ठी ही है  
जब क्रिया करनी कुछ नहीं तब ही फल नहीं है

आचार्या के कथन ऐसे गाए शब्द ही हैं  
एका तनय के ज्ञान से सब कर्मनय ही हैं  
आकाश तनय का ज्ञान ही है सर्वज्ञ का  
सर्वज्ञ ही जाने भविष्यत ही है ही ही

उपवास व्रत की क्रिया ही ही है सभी  
मडल विधानादिक क्रिया ही ही ही है



द्रव्यों को घोलने की क्रिया में वायु का उपयोग है ।  
 भगवान के प्रति चढ़ावा भी बंधकारी योग है ॥  
 अभिप्राय उमका है यही व्यवहारनय सब अंध है ।  
 भगवान की सब भक्तियां भ्रमणकारी बन्ध है ॥  
 प्रतिकूल आगम कथन के मिथ्या कथन यह हो रहा ।  
 सर्वज्ञ ही जाने भविष्यत समय कैसा आ रहा ॥  
 शुभ हो अशुभ ही चाह जैसा बंध एक समान है ।  
 एकांतनय का ज्ञान तमा कह रहा अज्ञान है ॥  
 तब बुद्धिमानों ने कहा अनेका त नय के ज्ञान से ।  
 अनेका त नय के न्याय बल से नर्क पात्र प्रमाण में ।  
 यदि एक सम ही बंध है तो भिन्न फल क्यों पा रहा ?  
 शुभगती और अशुभगति में आरमा क्या जा रहा ?  
 जब बंध एक समान है फिर किस लिय सुख वर्ग है ?  
 दुःख वर्ग के प्रतिकूल क्या हाता रहा दुःख वर्ग है ?  
 दुःखवर्ग के प्रतिकूल फिर उसरो मिला क्यों स्वर्ग है ?  
 फिर स्वर्ग के प्रतिकूल पाया जीव ने क्या नर्क है ??  
 ~न्यायतकवाद ।

यह सिद्ध है शुभ बंध बिन शुभ गती पाना कठिन है ।  
 सम्यक्त्व रुपी बंध बिन सम्यक्त्व पाना कठिन है ॥  
 पुण्यानुबन्धो पुण्य बिन लोकांत जाना कठिन है ।  
 सार्धोर्धमिद्धी बंध बिन यहाँ उपजना भी कठिन है ॥  
 सम्यक्त्व पुण्य सुबन्ध बिन मिलना परम शरीर है ।  
 यह आरमा भी इसीसे होता रहा अशरीर है ॥  
 जब बंध होगा नर्क का तब जीव जावेगा वहा ।  
 बिन बंध अपने आप ही जाता हुवा देखा क्या ??

इस भाति मुक्ती बन्ध होगा आत्मा को जब यहाँ ।  
 अनुबूल इसके आत्मा तब गमन कर देगा वहाँ ॥  
 जो बन्ध निश्चित हो चुका है जहाँ जाने के लिये ।  
 विपरीत इसके गमन भी कैसे करे अपने लिये ॥

११- जब बन्ध तीर्थकर हुआ तब ही तो तीर्थकर बने ।  
 वे कौन से हैं आत्मा बिन बन्ध तीर्थकर बने ?  
 बिन बन्ध के कोई बताने गमन करता आत्मा ?  
 ॥ परमात्मा के बन्ध बिन कैसे बने परमात्मा ?

—न्याय तर्कवाद ।

शुभ अशुभ बन्धों के अनेकों भेदनय के कथन हैं ।  
 शुभ अशुभ एक समान मानें यही मिथ्या बचन हैं ॥  
 शुभ बन्ध में है निर्जरा शुभ बन्ध मुक्ती रूप है ।  
 शुभबन्ध ही इस आत्मा का धर्म रूप स्वरूप है ॥  
 शुभबन्ध बिन वे कौन ऐसे हो गये हैं आत्मा ?  
 जो स्वयं शुभगति प्राप्त करके बन गये परमात्मा ?

—न्याय तर्कवाद ।

११ पर आजकल का ज्ञान मिथ्या कथन चलता कर रहा ।  
 जो मार्ग सीधा मोक्ष का था आज चलता बन रहा ॥  
 हम चल रहे हैं मार्ग चलते समय पलटा खा रहा ।  
 सर्वज्ञ ही जाने भविष्यत समय कैसा आ रहा ॥

शुभबन्ध के सापेक्ष से ही धर्म निश्चय साधना ।  
 उन अशुभ बन्धों के लिये शुभ बन्धों से काटना ॥  
 १ छोटे को छोटा चाहिये लोहा ही काटे लोह को ।  
 शुभ मोह भ्रम में नष्ट कर देता अशुभ के मोह को ॥

द्रव्या को धोने की क्रिया में पाप का उपयोग है ।  
 भगवान के प्रति चढ़ाना भी बंधकारी योग है ॥  
 अभिप्राय इमका है यही व्यवहारनय मध अध है ।  
 भगवान की सब भक्तियों में धमणकारी बंध है ॥  
 प्रतिबुल आगम कथन के मिथ्या कथन यह हो रहा ।  
 सर्वज्ञ ही जाने भविष्यत समय कैसा आ रहा ॥  
 ह्युम हो अशुम हो चाह जैसा बंध एक समान है ।  
 एकांतनय का ज्ञान ऐसा कह रहा अज्ञान है ॥  
 तब बुद्धिमाना ने कहा अनेका त नय के ज्ञान में ।  
 अनेका त नय के याय बल में तर्क शास्त्र प्रमाण में ।  
 यदि एक सम ही बंध है तो भिन्न फल क्यों पा रहा ?  
 शुभगती और अधोगति में आत्मा क्या जा रहा ?  
 जब बंध एक समान है फिर किस लिय सुग्न वर्ग है ?  
 सुग्न वर्ग के प्रतिबुल क्यों होता रहा दुग्न वर्ग है ?  
 दुग्नवर्ग के प्रतिबुल फिर उसका मिला क्या स्वर्ग है ?  
 फिर स्वर्ग के प्राप्तकूल पाया जीव ने क्यों नर्क है ??

—न्यायतकवाद !

यह सिद्ध है शुभ बंध बिन शुभ गती पाना कठिन है ।  
 सम्यक्त्व रुपी बंध बिन सम्यक्त्व पाना कठिन है ॥  
 पुण्यशुभ धी पुण्य बिन लोकांत जाना कठिन है ।  
 सर्वार्थसिद्धी बंध बिन वहां उपजना भी कठिन है ॥  
 सम्यक्त्व पुण्य सुख्य बिन मिलना चरम शरीर है ।  
 यह आत्मा भी इसीसे होता रहा अशरीर है ॥  
 जब बंध होगा नर्क का तब जीव जावेगा वहा ।  
 बिन बंध अपने आप ही जाता हुआ देखा कहा ??

इस भाति मुक्ती बंध होगी आत्मा को जब यहा ।  
अनुकूल इसके आत्मा तब गमन कर देगा यहा ॥  
ओ बंध निश्चित हो चुका है जहा जाने के लिये ।  
विपरीत इसके गमन भी कैसे करे अपने लिये ॥

जब बंध तीर्थकर हुवा तब ही तो तीर्थकर बने ।  
वे कौन से है आत्मा बिन बंध तीर्थकर बने ?  
बिन बंध के कोई बतादे गमन करता आत्मा ?  
परमात्मा के बंध बिन कैसे बने परमात्मा ?

—न्याय तर्कवाद ।

शुभ अशुभ बंधों के अनेकों भेदनय के बचन हैं ।  
शुभ अशुभ एक समान मानें यही मिथ्या बचन हैं ॥  
शुभ बंध म है निर्जरा शुभ बंध मुक्ती रूप है ।  
शुभबन्ध ही इस आत्मा का धर्म रूप स्वरूप है ॥  
शुभबन्ध बिन ये क न ऐसे हो गये हैं आत्मा ?  
जो स्वयं शुभगति प्राप्त करके बन गये परमात्मा ?

—न्याय तर्कवाद ।

पर आजकल का ज्ञान मिथ्या बचन चलटा कर रहा ।  
जो मार्ग सीधा मोक्ष का था आज चलटा बन रहा ॥  
हम चल रहे हैं मार्ग चलते समय पलटा खा रहा ।  
मर्षक ही जाने भविष्यत समय कैसा आ रहा ॥

१ शुभबन्ध के सापेक्ष से भी धर्म निष्पत्त्य साधना ।

२ उन अशुभ बंधों के लिये शुभ बंधनों से काटना ॥

३ छोदे दो मोक्ष चाहिये छोहा ही काटे छोह दो ।

४ शुभ मोह भल में नष्ट कर देता अशुभ के मोह को ॥

ऐकान्त नय के पक्ष में: यदि दक्ष होकर के रहें।  
 अनेकान्त धर्मों पर वृथा आक्षेप करते ही रहें॥  
 उस भेदनय आगम कथन का फिर कहो क्या अर्थ है ?  
 जब भेदनय ही ना रहा आगम कथन फिर व्यर्थ है ॥

—न्यायबल ।

सर्वोच्च सीढ़ी ऊपरी है शुद्ध निर्द्वय धर्म की।  
 पर प्रथम सीढ़ी मुख्य है व्यवहार नय के धर्म की ॥  
 जब प्रथम सीढ़ी से चढ़े ऊपर पहुँचना होय तब।  
 बिना प्रथम सीढ़ी के चढ़े ऊपर गया है कौन कब ??

क्रमवाद सीढ़ी जो चढ़े, वे शीघ्र ऊपर पहुँचते।  
 हे धर्म मर्त्यादा यही गुणवान इसको समझते ॥  
 पर आजकल प्रतिपुल इसने धारणा क्या हो रही।  
 अनका त-नय धमा क प्रति विपरीत सुद्धि हो रही ॥

चढ़ते हैं एक छलाना म निर्द्वय शिखर पर जो कभी।  
 गिरते हैं पंछे लोटपर व प्रथम सीढ़ी पर सभी ॥  
 व्यवहार नय के धर्म की जब प्रथम सीढ़ी चढ गये।  
 तब जोर भी आगे बढ़े क्रमवाद सीढ़ी चढ़ाये ॥  
 इस रीति से सर्वोच्च सीढ़ी शुद्ध नय को पागये।  
 दोना धरम पकडे हुए वे शुद्ध नय में आगये ॥

इस शुद्ध नय में आगये वा धर्म नहीं अभिप्राय है।

१. शारिर्ष वर्तन छोड़ दो वस एक निर्द्वय माह्य है ॥  
 २. यदि एक निर्द्वय माह्य होता लोप हो जाते सभी।  
 ३. अनेकान्त धर्म स्वल्पमय वे कथन ना होते कभी ॥

१. जब-कथन दोनों धर्म नय के लिए हैं भगवान ने ।  
 २. एकड़े रहो दोनों धरम, फिर क्यों पड़े अज्ञान में ?  
 ३. अनेका त नय धर्मों के ज्ञाता जानते इस मर्म को ।  
 ४. व्यवहार निश्चय धर्म को इनके अनीते धर्म को ॥

—यावत् !

व्यवहार निश्चय धर्म दोनों ही समुन्नत धर्म हैं ।  
 ये धर्म दोनों आत्मा के ही स्वभाविक धर्म हैं ॥

१. व्यवहारनय के धर्म द्वारा ही प्रवर्तन अर्थ है ।  
 २. निश्चय धरम का लाभ लेना, अथवा सब व्यर्थ है ॥

३. अनकांत धर्म स्वरूप कथनों में न अब श्रद्धान है ।  
 ४. ना क्रिया है ना आचरण भगवान । कैसा ज्ञान है ??

१. भगवान् ! तुम्हारे ही अनेकों धर्म के प्रति कथन हैं ।  
 २. उन कथन के आधार से आचार्यों ने कथन हैं ॥

आचार्या क कथन ऐसे लोप हमने कर दिए ।  
 उनके कथन को काटकर अपने कथन को भर दिया ॥

इस भाति से परातनय का ज्ञान उलटा चल रहा ।  
 मर्षज्ञ ही जाने भविष्यत समय कैसा जा रहा ??

१. ये शुद्ध शुद्ध निरजनादिष आत्माएँ ध्यर्थ हैं ।  
 २. संसार रूपी आत्माएँ सिद्ध सम शुद्धार्थ हैं ॥

३. विन अपेक्षा मानते संसार रूपा आत्माएँ ।  
 ४. है मारियमर्त को तरह से शुद्धार्मा = परमात्मा ॥

५. इस तरह से निज ओझा का शुद्ध अनुभव हो रहा ।  
 ६. मिष्ट्यानुर्भव के कारणों से अहित अपना हो रहा ॥

७. निज आत्मा परमात्मा समशुद्ध यदि होता कही ।  
 ८. तो रतनत्रय के धर्म का सेवन पभी होता नही ॥

स्यादवाद—प्रत्यक्षवाद !

उन मोक्ष मार्ग पदरोंकों का कथन ही सब व्यर्थ था ।  
 परमात्मा की भक्तियों का फिर कहो क्या अर्थ था ?  
 'उन वाय आभ्यन्तर तपों को किस लिये तपते सभी ?  
 यदि शुद्ध होता आत्मा ही भक्तियों करते कभी ?  
 निज आत्मा यदि शुद्ध है तो मुक्त क्यों होता नहीं ?  
 शुद्धात्मा संसार में रहते कृप देखा कही ??  
 चारित्र दर्शन शील संवम किसलिये शुभ कार्य हैं ?  
 निज आत्मा को शुद्ध करने के लिये अनिवार्य हैं ?  
 शक्ति की ही अपेक्षा है आत्मा परमात्मा ।  
 बिन शक्ति प्रगटे कहो कैसे योग परमात्मा  
 बनने की शक्ति बिना है तीनों तरह का आत्मा ?  
 इस शक्ति का ही अपेक्षा, बहिरात्म अन्तर आत्मा !!  
 रिपु कर्म क रहते कृप निज को गिन में निड हूँ ।  
 भगवान हूँ ! सर्वज्ञ हूँ ! त्रैलोक्य दर्शी ! शुद्ध हूँ !  
 बनने की ऐसी शक्तिया की अपेक्षा से मानना ।  
 पर अभी की इस अपेक्षा कुछ भी नहीं है जानना ॥

—आत्मविद्या !

सांख्य मती का कथन है मैं हूँ सिद्ध समान !  
 सदा शुद्ध है आत्मा सांख्य रूप भगवान !!  
 'जैनमती कृष्ण कर रहे सांख्य मती सम काज !  
 'सांख्य धर्म सम हो रहा धर्म प्रवर्तन आज ॥

ऐसा सैकड़ों वर्ष पूर्व ही से अपने योग बल द्वारा भगवान  
 बुद्ध बुद्ध आचार्य ने जान लिया था कि आगे काल दोष के  
 प्रभाव से अनेकानेक ज्ञान का हास होगा और मिथ्या एकान्त

नय ज्ञान के कारण कुछ जीव कपिल मुनि व मान्य धर्म समान अपनी आत्मा को बिना अपेक्षा दृष्टि के सग शुद्ध मानते रहते। ऐसा मानने से अनेकों आत्माओं का बड़ा ही जोड़त होगा। इस उद्देश्य से श्री तम आचार्य महाराज का यह कथन करना ही पडा है —

कम्मइय पग्गाणादि अपरिणमती हि कम्मभावा ।

मसारम्म अभावा पसज्जद मत्तसमओ या ॥

अर्थात् कामाण वर्गों के ज्ञानवरणात् द्रव्य कर्म नहीं परिणमन करेगे तो इस संसार का और ममारी जावों का अवस्थाओं का अभाव हो जायगा। और ह भावको। यदि तुम भी अपनी आत्मा को जिस प्रकार साध्यमत अकता, कमा से भिन्न, सदा शुद्ध मानता है उसी प्रकार मानत रहोगे तो तुम्हारी आत्मा साध्यमत व समान सदा सिद्ध स्वरूप ही रहगी। एसा मानने से संसार का अभाव हो जायगा।

भगवान् कुन्दकुन्द आचार्य

सय आचार्य महाराज के एसे मतार्थ कथन के आधार पर से उसके अनेकान्त अभिप्राया को लेती हुई — अनोखी न्याय युक्तियाँ प्रगट हुई —

निज आत्मा परमात्मा मं कर्म का ही भेद है ।  
 यदि कर्मकट जाये सभी तय शुद्धरूप अभेद है ॥  
 परमात्मा सम कर्मनय । स बन सक परमात्मा ।  
 स्वात्मानुभव या लक्ष्य लेन मात्र से नहि आत्मा ॥  
 स्वात्मानुभव या लक्ष्य लेन मात्र से ही आत्मा ।  
 देखा किसी ने है कभी बनता हुआ परमात्मा ॥



स्वात्मानुभव से मुक्ति ही यन्त्रि प्राप्त हो जाती कभी ।  
 अथवा अकेले चिंतन से मुक्ति हो जाती कभी ॥  
 अथवा अकेले ज्ञान नय से कर्म छूट जाने कभी ।  
 तब तो बहुत ही भ्रष्ट धा बचते परिभ्रम से सभी ॥  
 स्वात्मानुभव या लक्ष्य के यदि साथ में हो धर्मनय ।  
 तपध्यान समय शील चारित्र्यादि ऐसे कर्म नय ॥  
 स्वात्मानुभाव या लक्ष्य तब ही फलित उत्तम है सभी ।  
 करनी बिना परमात्मा बनते हुए देखा कभी ॥

परमात्म बनने के लिय चारित्र समय चाहिये ।  
 सत शील पच महात्रनों युत-तपरबया चाहिये ॥  
 उत्तमकृमादि मुयुक्त दसधर्मों का पालन चाहिये ।  
 बारह समुच्चल भावनाओं का प्रचालन चाहिये ॥  
 भगवान की शुद्धात्मा का ध्यान होना चाहिये ।  
 शुद्धात्मा के ल/य से शुद्धत्व आश्रय चाहिये ॥  
 तीर्थकरों के पुण्यमम पुण्यानुबन्धी चाहिये ।  
 पुण्यात्मा के पुण्य का नित उदय होना चाहिये  
 होती तभी है निर्जरा जब तीव्र पुण्य उदय रह ।  
 पापोदयो में निर्जरा का अर्थ ही विफलित रहे ॥  
 पापोत्मा, पुण्यात्मा की अपेक्षा से भेद है ।  
 जो भदनय जाने नहीं उस पर बड़ा ही गेद है ॥  
 पावात्मा, परमात्मा बनता हूँ देखा कभी ।  
 पुण्यात्मा - तीर्थकरों के पुण्य को देखो सभी ॥

॥ न्यायतर्कवाद ।

भ्रोवादि मान कपाय बिन हैं कौन ऐसे आत्मा ।  
 जो स्वय अपने आपही व बन गये बहिरात्मा ॥  
 चारित्र समय शीलव्रत बिन कौन ऐस आत्मा ।

जो स्वयं अपने आप ही वे बने अन्तर आत्मा ॥  
 चारित्र संयम शील व्रत बिन कौन ऐसे आत्मा ।  
 जो स्वयं अपने आप ही वे हो गये शुद्धात्मा ॥  
 यदि अग्रणी ही आत्मा परमात्मा धनते सभी ।  
 तो पंचमूल महाव्रतों के कथन ना होते कभी ॥

-अपूर्ण

—न्याय तर्कवाद ।

आगे द्वितीय भाग में और भी विशेष विस्तार से आत्म विद्याओं के चमत्कार मद् । आश्चर्यजनक । अनोखे कथन । अनोखी न्याय युक्तियों द्वारा उन महान घीतरागी दिगम्बर जैन आचार्या के सत्यार्थ कथनों के आधार पर से उनमें—अनेकान्त अभिप्रायों को लेते हुए किए गए हैं । तथा सम्यक् अनेकान्तन्य न्यायवर्तों एवं न्याय तर्कवादों द्वारा और भी न्याय युक्तियों के अनुपम अद्वितीय अन्य कथन भी किए गये हैं । जो शीघ्र ही प्रकाशित होंगे ।

निश्चय व्यवहार धर्म दोनों ही उपादेय,  
 साथी हैं जीवन के दोनों न छोड़िये ।  
 मोक्ष मार्ग में प्रधान आपस में मित्रवान,  
 आगम प्रमाण जान मुक्त को न मोड़िये ॥  
 भेद और अभेद रूप रतनत्रय धर्मवाद ।  
 यही सत्यार्थवाद दोनों को जोड़िये ।  
 निश्चय का लाभ यदि लेना है भय जीव,  
 सम्यक् व्यवहार से नाता न तोड़िये ।

—यावबल ।







---

प्राप्ति स्था

सेठ निरजनलाल जन मंत्री

भा व० शक्तिवीर दि० जैन सिद्धांत संस्कृतिणी सभा

१९१, नालवादेवी,

प्र० १९००]

बम्बई

---



---

दिनांक प्रिंटिंग मशर १९ जलरोड इ दोर

॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

। - मानव का धर्म - -



सहकर्ता -

श्री १०५ जुलुक आदिसागर महाराज



प्रकाशक

दिगम्बर जैन समाज, रेवाडी (गुड़गावां)

प्रथम बार  
(१०००)

वीर नि०  
२४६३

मूल्य  
पिनप

## मानव का कर्तव्य

- १- अपने इष्टदेव को मुख्य मानना ।
- २- अपने इष्टदेव की आराधना करना ।
- ३- उनके बतलाये हुये मार्ग पर चलना ।
- ४- विधायियों से बचना उनकी सगत छोडना ।
- ५- छोटी लगी आदतों को छोडना आगे वास्ते बचना
- ६ जो व्यक्ति सही ठीक धम के अनुकूल रहे, वैसे तो मानना बरना सुनना जरूर ।
- ७- धम वही है जो अपने से पहले बतलागये ।
- ८- आजका धर्म अराजकता बतलाता है सभी सज्जनों को नहीं सुनते ।
- ९- समय पालना मुख्य कर्तव्य बतलाया है ।
- १०- समय वही है जिससे बात बने ।
- ११- समय के बगर मनुष्य नहीं होता ।
- १२- समय पालने वाला अपने से हर दूसरे को अपना, तथा समझदार मानता है ।
- १३- विपरीत बोलने वाले से बात न करना ।
- १४- राह चलते को छोटे वचन नही निकालना ।
- १५- राह चलते इधर उधर नही देखना, इससे पहले तो समय अर्थात् कन्ट्रोल नही पलता दूसरे हिंसा हो जाती है ।
- १६- राह चलते का लिया हुआ सामान नहीं खाना ।

- १७ शरीर पर भडकीले अशोभायीय वस्त्र नहीं पहरना  
 १८- जिससे दूसरे देखकर ग्लानि करे और अपनी भी  
 नलाई नहीं होवे ।  
 १९ भोजन करना प्रकृति अनुकूल करना जिस से सेहत  
 ठीक रहे ।  
 २०- जिस समाज तथा समा में जावे योग्य स्थान पर  
 बैठें उस समाज की योग्य बातों को सुनना ।  
 २१- सुनकर ठीक होवे अनुसरण करे ।  
 २२- रात को बाजारों में नहीं घूमना ।  
 २३- रात को आराम लेने से पहले ही भोजन कर लेना  
 सोने से पहले कुछ अच्छी बातों का सुमरण कर लेना  
 २४- प्रात उठ कर रोज क्रिया से निबट कर अपने धर्म  
 के अनुकूल धर्म स्थान पर जाना ।  
 २५ धर्म स्थान पर पहले जाने से दिन भर मन स्वस्थ  
 रहता है ।  
 २६- शब्द यह बोलना जो निमा सको ।  
 २७ दिया हुआ वचन निमाना जरूरी ।  
 २८- ऐसे स्थान पर नहीं खड़े होना, जहाँ पर दुपचरित्र  
 की सम्भावना होवे अथवा छोटा काय जूवा आदि  
 होता होवे ।  
 २९- सनीमा जाने से अनेक कुविपन बढते हैं ।  
 ३० इतना नहीं घबराना जो दूसरे भी



- ३१- अपनी ली हुई प्रतिज्ञा नहीं छोड़ना ।  
 ३२- जो भी किसी को बचन दिया पूर्ण करना ।  
 ३३- गुरु, माता-पिता का कहना ठीक समझ  
 श्राव्ये जबाब में उत्तर नहीं देना ।  
 ३४- हिंसा से हर समय बचना ।  
 ३५- हिंसक जन्तुओं से दूर रहना ।  
 ३६- घातक हथियार बगैर सोचे समझे नहीं छूना ।  
 ३७- अनजान फल नहीं छूना ना छाना ।  
 ३८- फरेब करने वाले से दुबारा व्यापार नहीं करना ।  
 कर लिया हीनै निमटा लेना ।  
 ३९- किसी को धोखा नहीं देना, जो इन कार्यों पर  
 चलता है वही सच्चा मनुष्य है ।

\* यमा सिद्धाण \* .

# An Ideal Sadha



—आदर्श साधु

Published by —

L. Kastoorchand Khushalcharya  
Sacheti

# Introduction



Here is a summation of all the important duties and religious activities of a Jain Sadhu or an Ideal Sadhu. Readers can very well assert his ideal because the Ideal Sadhu follows and then preaches the well known Principles of Ahimsa and Truth. We have very well experienced the untireless and invincible power of Ahimsa in our national fight. This booklet will show you that how and why a Jain Sadhu is termed a complete Ahimsak in thought, word and deed. His character is glorified by his observance the vow of complete Brahmcharya and Contentment etc.

On the title a bust of Jain Divakr Prasidh Vakra Pandit Muni Sri Chauthmalji Maharaj is given and inside the book a photo of Tapasvi Muni Sri Nemichandji Maharaj is given simply for an introduction of a Jain Sadhu or an Ideal Sadhu.

In the end the Great Mantra is given in its original form.

—Printer

## AN IDEAL SADHU

---

Renunciation and Ahimsa in thought word and deed are the guiding principles of a Jain Sadhu. They do not take any intoxicant or eat meat. They never take the food cooked or purchased for their sake but they accept a little out of the food prepared in the ordinary course for their regular consumption by a family leading a pious life. Neither they ask anybody to prepare any special food like *Hala Puri* for them nor do they get angry with anybody who does not serve them with food when they visit him for *Bhikhsha* (i.e. food). As they do not keep over anything for the night or for the next day with them, they bring only as much food as will be sufficient to feed them for the time. Jain Sadhus do not eat or drink even water during night time and after sunset and before sunrise. They do not take any medicine during the night howsoever fatal their disease may be. Neither in summer season and very hot weather they fan themselves nor in winter season howsoever cool it

may be they warm themselves before fire or wrap themselves in more cloths than the ordinary 3 sheets which they can generally keep with them. What to say of warming themselves before fire they do not even burn fire at all. Neither they put on gloves and socks nor they use shoes of any kind or wooden sandals. They do not use any means of conveyance like horse, motor rail etc but always walk bare footed. Jain Sadhus do not own any landed or household property or keep with them any sort of cash or deposit with anybody else on their behalf. Wherever they go they put up in any house provided by the public after taking the owners permission. They do not smell scents. Similarly they do not wear flower garlands or even touch the flower. The pots and utensils used by them for food and drink are always all made of wood or clay. As they cannot keep with them utensils made of metals. So much that they cannot keep with them even a needle required to sew clothes. Whenever they require needle they borrow it from public and return it the same day. If by mistake they forget to return it the same day and happen to keep it over night they observe one day fast and if by chance it is lost and not returned to the owner they observe 3 days fast as penance. They carry on their back while on tours the little and absolutely necessary paraphernaliya like books of study utensils and cloths which they keep with them and never take anybody's help to carry the same for them or use rail, motor or other means of conveyance for transporting the same. They keep a white and neat piece of cloth on their mouth for two important reasons. Firstly

It is an emblem or sign of a Jain Sadhu who can be called an ideal and TIAGI SAINT observing the vow of Celibacy Ahimsa Truth and Contentment Secondly it acts as aaviour of small germ in the air by checking the hot breath of the mouth coming from into direct contact with them and thus causing their instantaneous death It also checks spittle on the religious scripture at the time of reading They keep with them a sort of wooden sweeping stick called OGHA or a protector of insects In day light when everything is visible with a naked eye while walking, they take special care to see that no ant insects etc. not crushed under their feet While in the darkness of the night specially when they cannot use any sort of lamp or torch to light the way for them and when these insects are not visible They first clean the path with their wooden sweeping before moving further each step to avoid crushing the insects etc. under their feet

Jain Saints uproot the hairs of their head beard and moustaches with their hands They never get themselves shaved by a barber nor do they use any razor or scissors for shaving purposes

Jain Saints never touch a woman They always observe the vow of complete Brahmacharya ( Celibacy ) in thought word and deed They never allow women even to hear their lecture in the night at the place where they have put up Even in day time women cannot remain with them unless there is the presence of at least one man They sit on cots chairs mats etc.

They live at one place for the four months of *Sararan* to *Kartik* (Hindi months) and deliver lectures daily. They tour from place to place during the remaining eight months of Summer and Winter. During this period of eight months they cannot stay at one place for more than a month. Their daily business is to deliver lectures to the public. They point out the path of Salvation and Purity even to great Kings & Rulers. The chief subjects or topics of their lecture are as follows -

There is God. Obey Him. Do no harm the innocent. Do not tell lie. Do not steal. Consider woman other than your wife as mother, sister or daughter and do not cohabit with your wife also on the 2nd, 5th, 8th, 11th and 14th, 15th day of every fortnight of the month and also during manses and sacred day. If you possess money spend it for the good of others. Do not take meat or wine. Do not give false evidence. Give up taking food in the night and never smoke or drink. Do not be extravagant. Do not get addicted to any vice. Avoid prostitution. Never be a hunter. Do not sacrifice a hen, a goat or a buffalo at the altar of any God or Goddess. They deliver lectures on important discourses like these giving many reasons.

Great dacoits give up robbing by hearing their lectures. Thousands of people give up their bad habits by hearing their teachings. They tour even in rural and hilly tracts and lecture to the people even upto three times a day and bring them to the right path of Salvation and Purity.



The Jain Sadhu who observed 52 days fast in Cawnpore fast even upto two months with the result that their weight is greatly reduced You will find one Photo of a Jain Saint (doing 52 days fast) whose weight is reduced by 34 lbs

The Jain Saints deliver lectures even to the Kings and Rulers dauntlessly and boldly They do not worry themselves about anything They observe complete fasts for a very long time

Some of them do not take anything except boiled water for a month Some keep

with the result that

You will find one Photo of a Jain Saint (doing 52 days fast) whose weight is reduced by 34 lbs

The Jain saints repeat and meditate over this Great Mantra

शमो अरिहन्ताय

I bow before the Great Soul ( who is free from passions of anger attachment etc )

शमो मिह्नाय

I bow before the Great God ( who is free from all troubles )

शमो आचरियाय

I bow before the Acharya following path of religion

शमो उव्ज्कायाय

I bow before the Religious Teacher Saint



यमो लोये सध्वसाहृण

I bow before the Saint ( who  
observes 5 great sacred Vow

Jain Saints are not idol worshippers i. e. they do not worship idols. They always meditate over the Great God and His qualities. Thousands of people derive immense benefit from the teachings of the Jain Saints.



द्वारा सरक्षणी सभा द्वारा प्रसारित—

—अनोखी अनेकान्त—

न्याय-युक्तियां

★

संपहकर्ता

सनतकुमार जैन, गुणा